

# श्रीमद्भगवद्गीता

(हिंदी अनुवाद)



भगवद गीता विश्व का अनमोल ग्रंथ है, जिसमें जीवन जीने का विज्ञान और आध्यात्मिक मार्गदर्शन दोनों समाहित हैं। हमारी वेबसाइट **BharatTemples.com** पर आप गीता को सरल हिंदी में अध्यायवार पढ़ सकते हैं, श्लोकों का अर्थ जान सकते हैं और PDF रूप में भी डाउनलोड कर सकते हैं।

## Our Mission

हमारा उद्देश्य है भारतीय संस्कृति और सनातन ज्ञान को हर घर तक पहुँचाना। भगवद गीता का संदेश समय से परे है और हर व्यक्ति के लिए जीवन पथ का दीपक है।

## Disclaimer

यह वेबसाइट केवल धार्मिक और शैक्षिक उद्देश्य से बनाई गई है। इसमें उपलब्ध अनुवाद और भावार्थ सरल भाषा में समझाने के लिए दिए गए हैं। मूल गीता संस्कृत श्लोक *श्रीमद्भगवद्गीता* से लिए गए हैं।

# श्रीमद्भगवद्गीता – हिंदी अनुवाद

श्रीमद्भगवद्गीता सनातन धर्म का सबसे महत्वपूर्ण ग्रंथ है, जिसे विश्व की महानतम आध्यात्मिक और दार्शनिक रचनाओं में गिना जाता है।

गीता महाभारत के युद्धक्षेत्र कुरुक्षेत्र में भगवान श्रीकृष्ण और अर्जुन के संवाद के रूप में प्रस्तुत है। इसमें 700 श्लोकों में जीवन के प्रत्येक पहलू – धर्म, कर्म, भक्ति, ज्ञान, योग और मोक्ष – का विज्ञान समाहित है।

---

## क्यों पढ़ें भगवद गीता?

- यह जीवन के सही मार्गदर्शन के लिए अनिवार्य है।
  - आपके कर्म, निर्णय और मानसिक शांति को सशक्त बनाती है।
  - विद्यार्थी, गृहस्थ, साधक और योगी सभी के लिए उपयोगी है।
  - पढ़ने के बाद आप इसे अपने जीवन में व्यवहारिक रूप से लागू कर सकते हैं।
- 

## सुझाव पढ़ने का तरीका

- रोज़ाना 1 श्लोक या 1 अध्याय पढ़ें।
- पढ़ते समय भावार्थ पर ध्यान दें और मनन करें।
- शांत वातावरण में पढ़ना अधिक प्रभावशाली होगा।
- आप चाहें तो इस PDF को छपाई या डिजिटल रूप में उपयोग कर सकते हैं।

# गीता के अध्याय

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 1: अर्जुन विषाद योग](#)

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 2: सांख्य योग](#)

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 3: कर्म योग](#)

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 4: ज्ञान कर्म संन्यास योग](#)

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 5: कर्म संन्यास योग](#)

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 6: ध्यान योग](#)

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 7: ज्ञान विज्ञान योग](#)

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 8: अक्षर ब्रह्म योग](#)

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 9: राजविद्या राजगुह्य योग](#)

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 10: विभूति योग](#)

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 11: विश्वरूप दर्शन योग](#)

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 12: भक्ति योग](#)

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 13: क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ विभाग योग](#)

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 14: गुणत्रय विभाग योग](#)

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 15: पुरुषोत्तम योग](#)

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 16: दैवासुर संपद विभाग योग](#)

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 17: श्रद्धात्रय विभाग योग](#)

[श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 18: मोक्ष संन्यास योग](#)

## श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 1: अर्जुन विषाद योग

अर्जुन विषाद योग भगवद गीता का प्रथम अध्याय है। इसमें महाभारत युद्ध के आरंभ से पहले का दृश्य वर्णित है, जब अर्जुन युद्धभूमि में अपने ही बंधु-बान्धवों, मित्रों और गुरुजनों को देखकर मोह और शोक से व्याकुल हो जाते हैं।

👉 यह अध्याय हमें बताता है कि मोह, आसक्ति और दुविधा मनुष्य की निर्णय क्षमता को कैसे प्रभावित करती है। इसी द्वंद्व के बीच आगे भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को जीवन का शाश्वत संदेश देंगे।

### श्लोक 1.1

धृतराष्ट्र बोले: हे संजय! धर्मभूमि कुरुक्षेत्र पर युद्ध की इच्छा से एकत्रित हुए मेरे और पाण्डु के पुत्रों ने क्या किया?

👉 अर्थ: धृतराष्ट्र ने संजय से युद्धभूमि में घटित घटनाओं का वर्णन करने के लिए प्रश्न किया।

### श्लोक 1.2

संजय बोले: हे राजन! पाण्डवों की सेना की व्यूह-रचना देखकर राजा दुर्योधन अपने गुरु द्रोणाचार्य के पास जाकर यह वचन कहने लगे।

### श्लोक 1.3

दुर्योधन बोले: आचार्य! पाण्डवों की विशाल सेना को देखिए, जिसे आपके शिष्य द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न ने कुशलता से व्यवस्थित किया है।

## श्लोक 1.4-1.6

यह सेना भीम और अर्जुन जैसे बलवान योद्धाओं के साथ युयुधान, विराट, द्रुपद, धृष्टकेतु, चेकितान, काशिराज, पुरुजित, कुन्तीभोज, शैव्य, युधामन्यु, उत्तमौजा, सुभद्रापुत्र अभिमन्यु तथा द्रौपदीपुत्र जैसे वीरों से सुसज्जित है।

## श्लोक 1.7

दुर्योधन बोले: अब हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! हमारे पक्ष के भी उन प्रमुख योद्धाओं को सुनिए, जो युद्ध में हमारी रक्षा के लिए समर्थ हैं।

## श्लोक 1.8-1.9

हमारी ओर भीष्म, कर्ण, कृपाचार्य, अश्वत्थामा, विकर्ण और भूरिश्रवा जैसे महायोद्धा हैं। इनके अतिरिक्त अनेक वीर योद्धा अपने जीवन का बलिदान करने के लिए तत्पर हैं।

## श्लोक 1.10-1.11

हमारी सेना असीम है और उसका नेतृत्व भीष्म पितामह कर रहे हैं। अतः मैं सभी कौरव योद्धाओं से आग्रह करता हूँ कि भीष्म की रक्षा में अडिग रहें।

## श्लोक 1.12-1.13

इसके बाद पितामह भीष्म ने सिंहनाद जैसी गूँज के साथ शंख बजाया। तत्पश्चात् नगाड़े, बिगुल, मृदंग और तुरही एक साथ बजने लगे, जिनकी ध्वनि से चारों ओर गगनभेदी नाद हुआ।

## श्लोक 1.14-1.19

तत्पश्चात् पाण्डव पक्ष से भी भगवान श्रीकृष्ण (हृषीकेश) और अर्जुन (पार्थ) ने अपने दिव्य शंख बजाए। भीम ने पौण्ड्र शंख, युधिष्ठिर ने अनन्तविजय, नकुल ने सुघोष, सहदेव ने मणिपुष्पक, काशिराज, शिखण्डी, धृष्टद्युम्न, सात्यकि, द्रुपद, द्रौपदीपुत्र एवं अभिमन्यु ने भी अपने शंख बजाए।

उनकी गर्जना से आकाश और पृथ्वी गुंजायमान हो गए और कौरवों के हृदय भय से काँप उठे।

## श्लोक 1.20-1.23

हनुमान ध्वज से सुशोभित रथ पर बैठकर अर्जुन ने अपना गाण्डीव उठाया और श्रीकृष्ण से कहा – “हे अच्युत! कृपा करके मेरा रथ दोनों सेनाओं के बीच खड़ा कीजिए ताकि मैं उन योद्धाओं को देख सकूँ जो धृतराष्ट्रपुत्रों की प्रसन्नता के लिए युद्ध हेतु खड़े हैं।”

## श्लोक 1.24-1.25

संजय बोले – अर्जुन के वचन सुनकर श्रीकृष्ण ने रथ को भीष्म, द्रोण और अन्य प्रमुख योद्धाओं के सामने खड़ा कर दिया और कहा – “हे पार्थ! कुरुओं की इस सभा को देखो।”

## श्लोक 1.26-1.27

अर्जुन ने दोनों सेनाओं में अपने बंधु-बान्धवों, मित्रों, गुरुजनों और संबंधियों को खड़ा देखा। यह देखकर उसका हृदय करुणा और शोक से भर गया।

## श्लोक 1.28–1.31

अर्जुन बोले – “हे कृष्ण! अपने स्वजनों को युद्ध हेतु तैयार देखकर मेरे अंग शिथिल हो रहे हैं, मुख सूख रहा है, गाण्डीव हाथ से छूट रहा है। मैं यहाँ खड़ा नहीं रह सकता, मुझे केवल अमंगल दिखाई दे रहा है।”

## श्लोक 1.32–1.35

“मुझे राज्य, सुख और विजय की इच्छा नहीं है। क्योंकि जिनके लिए यह सब चाहिए – वे आचार्य, पितामह, गुरु, भाई, पुत्र और संबंधी – सब युद्धभूमि में उपस्थित हैं। हे मधुसूदन! भले ही वे हमें मारें, मैं इन्हें नहीं मार सकता।”

## श्लोक 1.36–1.39

“धृतराष्ट्रपुत्र अत्याचारी हैं, परंतु अपने ही स्वजनों का वध करना पाप होगा। वे लोभ से अंधे होकर धर्म-अधर्म में भेद नहीं कर पाते, किंतु हम तो भलीभाँति समझते हैं, फिर भी यदि हम पाप करें तो दोष हमारा होगा।”

## श्लोक 1.40–1.44

“कुल नष्ट होने पर धर्म नष्ट होता है, स्त्रियाँ भ्रष्ट हो जाती हैं, अवांछित संतान उत्पन्न होती है और कुल तथा समाज की परंपराएँ नष्ट हो जाती हैं। ऐसे लोग नरक में गिरते हैं, यह मैंने अपने आचार्यों से सुना है।”

## श्लोक 1.45–1.46

“हाय! हम तो राजसुख की चाह में पाप का कर्म करने को तैयार हैं। यदि निहत्थे और प्रतिरोध न करने पर भी मुझे कौरव मार दें तो वही मेरे लिए कल्याणकारी होगा।”

## श्लोक 1.47

संजय बोले: यह कहकर अर्जुन ने अपना धनुष-बाण नीचे रख दिया और शोक से व्याकुल होकर रथ में बैठ गया।

## अध्याय 1 का सारांश (Summary of Chapter 1 – Arjuna Vishada Yoga)

अर्जुन विषाद योग हमें सिखाता है कि जब मनुष्य मोह और आसक्ति से बंधा होता है तो वह सही और गलत का निर्णय नहीं कर पाता। यह अध्याय जीवन की उन परिस्थितियों का प्रतीक है जब हमें अपने कर्तव्य और भावनाओं के बीच संतुलन साधना पड़ता है।

—



## श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 2: सांख्य योग

सांख्य योग भगवद गीता का दूसरा अध्याय है। इसे *गीता का हृदय* भी कहा जाता है क्योंकि इसमें आत्मा का स्वरूप, नश्वर और अमर तत्वों का भेद, कर्तव्य पालन का महत्व और निष्काम कर्मयोग की शिक्षा दी गई है।

पहले अध्याय में अर्जुन शोक और मोह से ग्रसित होकर युद्ध से पीछे हटना चाहते हैं। इस अध्याय में भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को समझाते हैं कि आत्मा अजर-अमर है और मनुष्य को अपने कर्तव्य (धर्म) का पालन करते हुए फल की चिंता नहीं करनी चाहिए।

### श्लोक 2.1

संजय बोले: करुणा और विषाद से व्याकुल, आँसुओं से भीगे नेत्रों वाले अर्जुन से भगवान माधव ने इस प्रकार कहा।

### श्लोक 2.2-2.3

श्रीकृष्ण बोले: हे अर्जुन! यह दुर्बलता और मोह तुम्हें शोभा नहीं देता। हे पराक्रमी! यह हृदय की क्षुद्रता है, इसे त्यागकर युद्ध के लिए खड़े हो जाओ।

### श्लोक 2.4-2.5

अर्जुन बोले – “हे मधुसूदन! मैं भीष्म और द्रोण जैसे पूज्य गुरुओं पर बाण कैसे चलाऊँ? भिक्षा का जीवन जीना भी उनसे युद्ध करने से श्रेष्ठ है।”

## श्लोक 2.6–2.9

अर्जुन ने कहा – “मुझे यह समझ में नहीं आता कि राज्य और सुख पाकर भी मैं कैसे दुःख दूर करूँगा, जब अपने ही बंधुओं का वध करना पड़ेगा। मैं आपका शिष्य हूँ, कृपया मुझे मार्गदर्शन दें।” यह कहकर अर्जुन मौन हो गए।

## श्लोक 2.10–2.12

संजय बोले – तब भगवान श्रीकृष्ण ने मुस्कराकर कहा – “हे पार्थ! तुम व्यर्थ ही शोक कर रहे हो। आत्मा कभी न जन्म लेती है और न मरती है। न मैं कभी न था, न तुम, और न ही ये राजा कभी न रहेंगे।”

## श्लोक 2.13–2.16

“जैसे शरीर में बाल्यावस्था, युवावस्था और वार्धक्य आता है, वैसे ही मृत्यु के बाद आत्मा दूसरा शरीर धारण करती है। जो विवेकी है, वह इसमें मोह नहीं करता। जो असत्य है, वह स्थायी नहीं, और जो सत्य है वह कभी नाशवान नहीं।”

## श्लोक 2.17–2.20

“आत्मा अविनाशी है। इसका न कोई जन्म है, न मृत्यु। यह अजर, अमर, अव्यय, शाश्वत और सर्वव्यापी है। कोई इसे शस्त्र से काट नहीं सकता, अग्नि जला नहीं सकती, जल भिगो नहीं सकता, और वायु सुखा नहीं सकती।”

## श्लोक 2.21–2.25

“जो आत्मा को अविनाशी जानता है, उसके लिए शोक का कोई कारण नहीं। आत्मा अदृश्य, अचिन्त्य और अविकार है। इसलिए हे अर्जुन! तुम शोक करने योग्य नहीं हो।”

## श्लोक 2.26–2.30

“यदि तुम आत्मा को जन्म और मृत्यु वाला मानो, तब भी शोक करने का कारण नहीं है। जन्म लेने वाले की मृत्यु निश्चित है और मृत्यु के बाद जन्म निश्चित है। अतः जिस बात को बदला नहीं जा सकता, उस पर शोक करना व्यर्थ है।”

## श्लोक 2.31–2.38

“हे क्षत्रिय! तुम्हारे लिए धर्मयुद्ध से बढ़कर और कोई श्रेष्ठ कर्तव्य नहीं है। यदि तुम युद्ध नहीं करोगे तो अपने धर्म और कीर्ति को खो दोगे। सुख-दुःख, लाभ-हानि, जय-पराजय को समान मानकर कर्तव्य हेतु युद्ध करो, यही तुम्हारा धर्म है।”

## श्लोक 2.39–2.47

“अब मैं तुम्हें बुद्धियोग समझाता हूँ। केवल कर्म करने का अधिकार तुम्हारा है, फल पर नहीं। कर्म के फल की चिंता छोड़कर निष्काम भाव से कर्म करना ही योग है। कर्म में आसक्ति छोड़ो और योग में स्थिर रहो।”

## श्लोक 2.48–2.53

“सफलता और असफलता में समान रहना ही योग है। जो मनुष्य इन्द्रियों से आकर्षित हुए बिना बुद्धि से स्थिर रहता है, वही योगी है। जब तुम्हारी बुद्धि मोह से मुक्त होकर स्थिर होगी, तब तुम आत्मज्ञान प्राप्त करोगे।”

## श्लोक 2.54–2.72 (स्थितप्रज्ञ योग)

अर्जुन ने पूछा – “स्थितप्रज्ञ योगी का स्वरूप कैसा है?”

श्रीकृष्ण ने कहा – “जो मनुष्य इच्छाओं को त्यागकर आत्मा में संतुष्ट रहता है, जो सुख-दुःख में समभाव रखता है, राग-द्वेष से मुक्त है, इन्द्रियों पर नियंत्रण रखता है, वही स्थितप्रज्ञ है। जिसका मन शांति में स्थिर है, वही परम सुख को प्राप्त करता है। यह ब्रह्मस्थिति है – इसमें स्थित होकर मनुष्य मृत्यु के समय भी मोक्ष को प्राप्त करता है।”

## अध्याय 2 का सारांश

सांख्य योग में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को आत्मा की अमरता, कर्तव्य पालन का महत्व और निष्काम कर्मयोग की शिक्षा दी। यही गीता का मूल संदेश है – “कर्म कर, फल की चिंता मत कर”।

–

## श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 3: कर्म योग

कर्म योग भगवद गीता का तीसरा अध्याय है। इसमें भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को समझाते हैं कि केवल ज्ञान से नहीं, बल्कि निष्काम कर्म से मुक्ति प्राप्त होती है। मनुष्य को अपने कर्तव्य का पालन अवश्य करना चाहिए।

जो लोग कर्म का त्याग कर बैठे रहते हैं, वे जीवन में बंधन से मुक्त नहीं होते। कर्म से भागना ही मोह है। लेकिन जो व्यक्ति फल की इच्छा त्यागकर ईश्वर को समर्पित होकर कर्म करता है, वही सच्चा योगी और ज्ञानी है।

### श्लोक 3.1–3.2

अर्जुन बोले: हे जनार्दन! यदि आपको ज्ञान को ही श्रेष्ठ मानना है, तो फिर मुझे युद्ध जैसे भयानक कर्म के लिए क्यों प्रेरित करते हैं? आपके वचनों से मैं भ्रमित हूँ, कृपया स्पष्ट रूप से बताइए कि मेरे लिए कौन-सा मार्ग श्रेयस्कर है।

### श्लोक 3.3–3.4

श्रीकृष्ण बोले: हे अर्जुन! संसार में दो प्रकार के मार्ग बताए गए हैं – ज्ञानयोग और कर्मयोग। केवल कर्म का त्याग करके कोई निष्कामता प्राप्त नहीं करता, और न ही कर्म से विरक्त होकर कोई सिद्धि को प्राप्त होता है।

### श्लोक 3.5–3.6

मनुष्य एक क्षण भी बिना कर्म किए नहीं रह सकता, प्रकृति के गुण उसे कर्म करने के लिए बाध्य करते हैं। जो इन्द्रियों को वश में किए बिना कर्म का त्याग करता है, वह मिथ्याचार कहलाता है।

## श्लोक 3.7-3.9

जो मनुष्य इन्द्रियों पर नियंत्रण रखते हुए कर्तव्य कर्म करता है, वही श्रेष्ठ है। बिना स्वार्थ के कर्म करना ही पुण्य है, अन्यथा कर्म बंधन का कारण बनता है। इसलिए ईश्वर के लिए कर्म करो।

## श्लोक 3.10-3.16

सृष्टि के आरंभ में ब्रह्माजी ने यज्ञ और कर्म को मिलाकर मनुष्यों को उत्पन्न किया। यज्ञ-भाव से किए गए कर्म मनुष्य को पाप से मुक्त करते हैं।  
जो केवल भोग में लगे रहते हैं और यज्ञ नहीं करते, वे व्यर्थ जीवन जीते हैं।

## श्लोक 3.17-3.19

जिसे आत्मसुख में संतोष है और जिसे कर्मफल की आवश्यकता नहीं, वह कुछ भी कर्म करे तो बंधन में नहीं पड़ता। परंतु साधारण मनुष्यों को कर्म करते रहना चाहिए, क्योंकि बिना कर्म किए जीवन संभव नहीं।

## श्लोक 3.20-3.24

राजा जनक आदि ने कर्म करते हुए ही मुक्ति पाई। जो श्रेष्ठ पुरुष जैसा आचरण करता है, साधारण लोग उसी का अनुसरण करते हैं।

यदि मैं (भगवान) भी कर्म न करूँ तो यह सृष्टि नष्ट हो जाएगी। इसलिए जगत के कल्याण हेतु कर्म करना ही आवश्यक है।

## श्लोक 3.25–3.29

अज्ञानी लोग आसक्ति से कर्म करते हैं, जबकि ज्ञानी लोग दूसरों को भ्रमित किए बिना कर्म करते रहते हैं। गुण और प्रकृति के प्रभाव से ही कर्म होते हैं, लेकिन अहंकारी मनुष्य सोचता है कि “मैं ही सब कर रहा हूँ।”

## श्लोक 3.30–3.35

हे अर्जुन! सब कर्म मुझे अर्पित करके युद्ध करो। मोह और स्वार्थ को त्यागकर समभाव से कार्य करो।

अपने स्वधर्म का पालन करना ही उत्तम है, चाहे उसमें कठिनाई क्यों न हो। परधर्म का पालन करने से मृत्यु भी श्रेयस्कर है।

## श्लोक 3.36–3.43 (कामा का विषय)

अर्जुन ने पूछा – “मनुष्य पापपूर्ण कर्म क्यों करता है?”

भगवान बोले – “काम (इच्छा) और क्रोध ही शत्रु हैं। यह रजोगुण से उत्पन्न है और यह सबको बांधता है।

इस काम को जीतकर ही आत्मज्ञान प्राप्त होता है। इन्द्रियों, मन और बुद्धि को वश में करके आत्मा के सहारे स्थिर रहो।”

## अध्याय 3 का सारांश

कर्म योग हमें सिखाता है कि –

- कर्म से भागना उचित नहीं है।
- बिना आसक्ति के किया गया कर्म ही मुक्ति का मार्ग है।
- श्रेष्ठजन का आचरण समाज के लिए आदर्श बनता है।
- काम और क्रोध सबसे बड़े शत्रु हैं, जिन्हें जीतना आवश्यक है।

👉 यही कारण है कि गीता का यह अध्याय “निष्काम कर्मयोग” की आधारशिला है।

—



## श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 4: ज्ञान कर्म संन्यास योग

गीता का चौथा अध्याय ज्ञान, कर्म और संन्यास के अद्भुत संगम की शिक्षा देता है।

यहाँ भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को बताते हैं कि उन्होंने यह *अविनाशी योग* पहले सूर्यदेव और ऋषियों को दिया था।

इस अध्याय में अवतारवाद (भगवान के धरती पर अवतरण का रहस्य), निष्काम कर्म की महिमा और ज्ञान से कर्म का शुद्ध होना विस्तार से वर्णित है।

### श्लोक 4.1–4.3

श्रीकृष्ण बोले – “मैंने यह सनातन योग पहले सूर्यदेव को दिया, सूर्य ने मनु को, और मनु ने इक्ष्वाकु को बताया। यह परंपरा से चला आ रहा था, लेकिन समय के साथ खो गया। अब मैं यह अमूल्य ज्ञान तुम्हें देता हूँ क्योंकि तुम मेरे भक्त और सखा हो।”

### श्लोक 4.4–4.6

अर्जुन ने पूछा – “आप तो अभी जन्मे हैं, फिर आपने सूर्य को यह ज्ञान कैसे दिया?”  
भगवान बोले – “हे पार्थ! मेरे अनेक जन्म हुए हैं और तुम्हारे भी, परन्तु मैं उन्हें जानता हूँ, तुम नहीं। जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब-तब मैं अवतार लेता हूँ। धर्म की रक्षा, सज्जनों की रक्षा और दुष्टों के विनाश हेतु मैं प्रकट होता हूँ।”

### श्लोक 4.7–4.9

“जब भी धर्म की हानि होती है और अधर्म बढ़ता है, तब मैं अवतार लेता हूँ।

साधुओं की रक्षा और पापियों के विनाश के लिए, धर्म की स्थापना हेतु मैं युग-युग में प्रकट होता हूँ।

जो मेरे अवतार और कर्मों के दिव्य स्वरूप को जानता है, वह मृत्यु के बाद मुझे प्राप्त होता है और जन्म-मृत्यु से मुक्त हो जाता है।”

## श्लोक 4.10–4.15

कई महात्माओं ने राग-द्वेष से मुक्त होकर, मन और आत्मा को संयमित कर, ज्ञान और कर्म से ईश्वर को प्राप्त किया।

हे अर्जुन! मैं सब कर्म करता हूँ, परन्तु उनसे बंधा नहीं हूँ। इसी प्रकार तुम भी निष्काम भाव से कर्म करो।

## श्लोक 4.16–4.23

कर्म, अकर्म और विकर्म का रहस्य अत्यंत गूढ़ है।

- जो निष्काम भाव से कर्म करता है, वही ज्ञानी है।
- जिसकी आसक्ति समाप्त हो गई है, वह कर्मों में लिप्त रहते हुए भी कर्मफल से मुक्त रहता है।
- ऐसा ज्ञानी योगी ही शांति और मोक्ष को प्राप्त करता है।

## श्लोक 4.24–4.32 (यज्ञ की विविधता)

भगवान ने कहा – “सभी यज्ञ (ज्ञान, तपस्या, दान, इन्द्रियनिग्रह) आत्मशुद्धि के साधन हैं।

परंतु ज्ञानयज्ञ सबसे श्रेष्ठ है, क्योंकि इसमें सभी कर्म ज्ञानरूपी अग्नि में जल जाते हैं।”

## श्लोक 4.33–4.42

ज्ञान से बढ़कर कोई पवित्र तत्व नहीं है।

- ज्ञान को गुरु के चरणों में विनम्र होकर, सेवा और प्रश्न से प्राप्त करो।
- ज्ञानी व्यक्ति आत्मा में स्थित रहता है और संशयों से मुक्त होता है।
- हे अर्जुन! अज्ञान से उत्पन्न संदेह को तलवार की तरह ज्ञान से काटो और कर्मयोग में लग जाओ।

## अध्याय 4 का सारांश

ज्ञान कर्म संन्यास योग हमें सिखाता है कि –

- भगवान समय-समय पर धर्म की स्थापना हेतु अवतार लेते हैं।
- कर्मफल त्यागकर कर्म करना ही मुक्ति का मार्ग है।
- सभी यज्ञों में ज्ञानयज्ञ सर्वोत्तम है।
- गुरु के माध्यम से प्राप्त ज्ञान ही अज्ञान रूपी अंधकार को नष्ट करता है।

👉 यह अध्याय गीता के अवतारवाद और ज्ञानयोग का आधार है।

—

# श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 5: कर्म संन्यास योग

गीता का पाँचवाँ अध्याय कर्म और संन्यास के अंतर को स्पष्ट करता है।

अर्जुन जानना चाहता है कि – क्या संन्यास (कर्म त्याग) श्रेष्ठ है या कर्मयोग (निष्काम कर्म करना)।

श्रीकृष्ण बताते हैं कि दोनों ही मार्ग मोक्षदायी हैं, लेकिन निष्काम कर्मयोग अधिक सरल और श्रेष्ठ है, क्योंकि यह जीवन जीते-जी भी साधक को शांति और मुक्ति प्रदान करता है।

## श्लोक 5.1–5.6

अर्जुन ने पूछा – “हे कृष्ण! आप कभी संन्यास की प्रशंसा करते हैं और कभी कर्मयोग की। कृपया निश्चित रूप से बताइए कि इनमें कौन-सा श्रेष्ठ है?”

भगवान बोले –

- संन्यास और कर्मयोग दोनों ही उत्तम हैं, परन्तु निष्काम कर्मयोग अधिक श्रेष्ठ है।
- जो व्यक्ति द्वेष और आसक्ति से रहित होकर कर्म करता है, वही सच्चा संन्यासी है।
- केवल कर्म त्यागने वाला नहीं, बल्कि फल-त्याग से कर्म करने वाला वास्तविक योगी है।

## श्लोक 5.7–5.12

- जो मन और इन्द्रियों को जीत लेता है, वह आत्मसंयमी योगी सभी जीवों को समान दृष्टि से देखता है।
- कर्मयोगी व्यक्ति निष्काम भाव से कर्म करता है और कर्मफल का त्याग कर शांति प्राप्त करता है।
- जबकि आसक्त व्यक्ति कर्मफल में बंध जाता है।

## श्लोक 5.13–5.16

- ज्ञानी योगी मन से सब कर्मों को ईश्वर को अर्पित करता है और बाहरी रूप से केवल शरीर द्वारा कर्म करता है।
- ऐसा योगी पाप और पुण्य से मुक्त रहता है।
- जैसे सूर्य अंधकार को दूर करता है, वैसे ही ज्ञान अज्ञान को नष्ट कर देता है।

## श्लोक 5.17–5.21

- जिसकी बुद्धि और मन ईश्वर में स्थिर हैं, वही मुक्त जीव है।
- ज्ञानी ब्राह्मण, गधा, गाय, कुत्ता या चाण्डाल — सबको समान दृष्टि से देखता है।
- वह न सुख में हर्षित होता है, न दुःख में विषादग्रस्त — यही योगी की स्थिति है।

## श्लोक 5.22–5.26

- इन्द्रिय विषयों से उत्पन्न सुख दुःख का कारण होता है और नाशवान है।

- जो योगी इच्छाओं और क्रोध को जीत लेता है, वही आनंद को प्राप्त करता है।
- ऐसा आत्मसंयमी योगी ईश्वर का साक्षात्कार करता है और अमर आनंद का अनुभव करता है।

## श्लोक 5.27–5.29

- जो साधक प्राणायाम, इन्द्रियनिग्रह और ध्यान से मन को स्थिर करता है, वह ब्रह्म में लीन हो जाता है।
- ऐसा योगी सब भूतों का मित्र है और ईश्वर का अनन्य भक्त होता है।
- वह शांति, मुक्ति और परम सुख को प्राप्त करता है।

## अध्याय 5 का सारांश

कर्म संन्यास योग हमें सिखाता है कि –

- केवल कर्म का त्याग नहीं, बल्कि फल का त्याग ही सच्चा संन्यास है।
- कर्मयोग अधिक व्यावहारिक और सरल मार्ग है।
- समदर्शी योगी सुख-दुःख, मित्र-शत्रु और मान-अपमान में समान भाव रखता है।
- ऐसा योगी अंततः शांति और मोक्ष प्राप्त करता है।

👉 यह अध्याय स्पष्ट करता है कि निष्काम कर्मयोग ही गीता का मूल संदेश है।

## श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 6: ध्यान योग

गीता का छठा अध्याय ध्यान योग कहलाता है।  
इसमें श्रीकृष्ण बताते हैं कि –

- सच्चा योगी कौन है,
- ध्यान की विधि क्या है,
- और योगी का जीवन कैसा होना चाहिए।

इस अध्याय में योग के विभिन्न रूपों में ध्यान योग की महिमा और श्रेष्ठता बताई गई है।

### श्लोक 6.1–6.4

श्रीकृष्ण बोले –

- जो व्यक्ति बिना फल की इच्छा के अपना कर्तव्य करता है, वही सच्चा योगी है, न कि केवल कर्म त्यागने वाला।
- जिसने इन्द्रियों को वश में कर लिया है और समता में स्थित है, वही सच्चा संन्यासी और योगी है।

### श्लोक 6.5–6.9

- मनुष्य स्वयं अपना मित्र है और स्वयं शत्रु भी।
- संयमित मन वाले के लिए मन मित्र है, और असंयमित मन वाले के लिए वही शत्रु है।

- योगी सुख-दुःख, मित्र-शत्रु, मान-अपमान और सभी में समभाव रखता है।

## श्लोक 6.10–6.17

- योगी को एकांत में बैठकर, स्थिर और शुद्ध मन से, ईश्वर का ध्यान करना चाहिए।
- उसके लिए आसन न बहुत ऊँचा होना चाहिए न बहुत नीचा।
- भोजन, आहार, विहार और कर्म सब में संतुलन रखने वाला ही योग में सफल होता है।

## श्लोक 6.18–6.23

- जब साधक मन और इन्द्रियों को नियंत्रित कर आत्मा में स्थित हो जाता है, तब वह योग की सिद्धि को प्राप्त करता है।
- उस समय उसे सांसारिक दुख नहीं विचलित करते और वह परम सुख का अनुभव करता है।

## श्लोक 6.24–6.32

- योगी को धीरे-धीरे मन को नियंत्रित कर आत्मा में ही स्थिर करना चाहिए।
- जब योगी सब प्राणियों में आत्मा को और आत्मा में सब प्राणियों को देखता है, तब वह परम एकता को अनुभव करता है।



## श्लोक 6.33–6.36

अर्जुन ने पूछा – “हे कृष्ण! ध्यान योग अत्यंत कठिन है क्योंकि मन चंचल है। इसे रोकना हवा रोकने के समान कठिन है।”

श्रीकृष्ण बोले –

- निस्संदेह मन चंचल है, लेकिन अभ्यास और वैराग्य से इसे वश में किया जा सकता है।
- जिसने मन को जीत लिया है, वही योगी है।

## श्लोक 6.37–6.45

अर्जुन ने प्रश्न किया – “यदि कोई योगी साधना में असफल हो जाए तो उसका क्या होता है?”  
श्रीकृष्ण ने कहा –

- ऐसा योगी नष्ट नहीं होता। वह अगले जन्म में पुनः योगाभ्यास करता है और अपने पिछले साधना संस्कारों के कारण शीघ्र उन्नति प्राप्त करता है।

## श्लोक 6.46–6.47

“सभी तपस्वियों, ज्ञानी और कर्मियों में श्रेष्ठ योगी वही है जो अपने मन को मुझमें लगाता है। जो भक्तिपूर्वक मेरा स्मरण करता है, वही सबसे उत्तम योगी है।”

## अध्याय 6 का सारांश

ध्यान योग हमें सिखाता है कि –

- योग केवल कर्म त्याग या तपस्या नहीं, बल्कि समभाव और आत्मसंयम है।
- ध्यान की साधना से मन स्थिर होता है और आत्मा ईश्वर में लीन हो जाती है।
- योगियों में श्रेष्ठ वही है जो भक्तिभाव से भगवान का ध्यान करता है।

👉 यह अध्याय स्पष्ट करता है कि भक्ति सहित ध्यान योग ही परम योग है।

–

## श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 7: ज्ञान विज्ञान योग

गीता का सातवाँ अध्याय ज्ञान और विज्ञान योग कहलाता है। इस अध्याय में भगवान श्रीकृष्ण अपने भक्तों को यह बताते हैं कि –

- भक्ति से उन्हें किस प्रकार जाना जा सकता है,
- उनका दैवी और भौतिक स्वरूप क्या है,
- तथा कौन लोग भगवान को जानते हैं और कौन मोहग्रस्त रहते हैं।

यह अध्याय ईश्वर के तत्त्वज्ञान के साथ-साथ उनके भक्ति स्वरूप का रहस्य प्रकट करता है।

### श्लोक 7.1–7.3

श्रीकृष्ण बोले – “हे अर्जुन! मन और बुद्धि को मुझमें लगाकर, योग में स्थित होकर सुनो। इस प्रकार तुम मुझे संपूर्ण रूप से जान सकोगे।

हजारों में कोई एक मुक्ति का प्रयास करता है और उनमें से भी कोई विरला मुझे जान पाता है।”

### श्लोक 7.4–7.7

- मेरी प्रकृति आठ प्रकार की है – पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार।
- यह मेरी *अपर प्रकृति* है।
- जबकि जीवात्मा मेरी *पर प्रकृति* है।
- समस्त जगत इन्हीं दोनों से उत्पन्न है।

- मैं ही समस्त सृष्टि का कारण और आधार हूँ।
- जैसे मोतियों की माला में धागा सबको बाँधता है, वैसे ही मैं समस्त जगत में व्याप्त हूँ।

## श्लोक 7.8–7.12

- हे अर्जुन! जल में रस, सूर्य और चन्द्रमा में प्रकाश, वेदों में ओंकार, आकाश में ध्वनि और मनुष्यों में पुरुषत्व – यह सब मैं हूँ।
- मैं पृथ्वी की सुगंध, अग्नि की ऊष्मा और सभी प्राणियों का जीवन हूँ।
- सब गुण, सात्त्विक, राजसिक और तामसिक भी मुझसे ही उत्पन्न होते हैं।

## श्लोक 7.13–7.19

- यह त्रिगुणात्मक माया संसार को मोह में डाल देती है। केवल वही लोग मुझे भजते हैं जो इस माया को पार कर लेते हैं।
- दुष्ट और अज्ञानी लोग मुझे नहीं पहचानते।
- चार प्रकार के भक्त मुझे भजते हैं – दुःखी, धन की इच्छा वाले, जिज्ञासु और ज्ञानी।
- इनमें से ज्ञानी सबसे श्रेष्ठ है क्योंकि वह अनन्य भाव से मुझे प्रेम करता है।
- कई जन्मों के बाद ज्ञानी यह समझता है कि “सब कुछ वासुदेव ही है।”

## श्लोक 7.20–7.23

- जो लोग अन्य देवताओं की उपासना करते हैं, वे वास्तव में मुझे ही भजते हैं, परंतु अविद्या से।

- वे श्रद्धा से उन देवताओं की पूजा करते हैं और उनसे सीमित फल पाते हैं, किंतु परम फल केवल मुझे भजने से ही मिलता है।

## श्लोक 7.24–7.30

- अज्ञानी लोग मुझे अजन्मा और अविनाशी होते हुए भी जन्मा हुआ मानते हैं।
- मैं अपने योगमाया से आवृत रहता हूँ, इसलिए सामान्य लोग मुझे नहीं पहचान पाते।
- लेकिन जो महात्मा मुझे जानते हैं, वे अनन्य भाव से भक्ति करते हैं और अंत समय में भी मुझे ही स्मरण करते हैं।

## अध्याय 7 का सारांश

ज्ञान विज्ञान योग हमें सिखाता है कि –

- भगवान की अपर और पर प्रकृति से यह जगत बना है।
- जो भक्ति और ज्ञान से भगवान को जानता है, वही वास्तव में मुक्त होता है।
- अन्य देवताओं की पूजा भी अंततः भगवान तक पहुँचाती है, परंतु सर्वोच्च फल केवल वासुदेव-भक्ति से मिलता है।
- ज्ञानी और भक्त भगवान को ही सबका आधार और परम सत्य मानते हैं।

👉 यह अध्याय स्पष्ट करता है कि भक्ति ही भगवान को जानने का सर्वोत्तम साधन है।

## श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 8: अक्षर ब्रह्म योग

गीता का आठवाँ अध्याय अक्षर ब्रह्म योग कहलाता है।  
इसमें श्रीकृष्ण अर्जुन के प्रश्नों का उत्तर देते हैं और बताते हैं कि –

- ब्रह्म क्या है,
- अध्यात्म क्या है,
- कर्म क्या है,
- मृत्यु के समय ईश्वर-स्मरण का महत्व क्या है।

यह अध्याय जीवात्मा, परमात्मा और मृत्यु-काल में स्मरण की गूढ़ शिक्षा प्रदान करता है।

### श्लोक 8.1–8.2

अर्जुन ने पूछा – “हे भगवान! ब्रह्म क्या है? अध्यात्म क्या है? कर्म क्या है? अधिभूत, अधिदैव और अधियज्ञ किसे कहते हैं?”

### श्लोक 8.3–8.4

भगवान बोले –

- अविनाशी परम सत्य को *ब्रह्म* कहते हैं।
- आत्मा का स्वरूप *अध्यात्म* है।
- सृष्टि में जो कर्म प्राणियों को उत्पन्न करता है, वही *कर्म* है।
- नश्वर वस्तुओं को *अधिभूत*, देवताओं को *अधिदैव* और यज्ञ में मैं स्वयं *अधियज्ञ* हूँ।

## श्लोक 8.5–8.7

- जो मृत्यु के समय मुझे स्मरण करता है, वह मुझे ही प्राप्त होता है।
- अंत समय में जिस भाव का स्मरण किया जाता है, वही अगला जन्म निर्धारित करता है।
- इसलिए हे अर्जुन! युद्ध करते हुए भी मन और बुद्धि को मुझमें लगाकर सदा मेरा स्मरण करो।

## श्लोक 8.8–8.13

- जो साधक अचल मन से निरंतर ईश्वर का स्मरण करता है, वह मुझे ही प्राप्त करता है।
- ब्रह्म का ध्यान करने वाला योगी मृत्यु के समय “ॐ” का उच्चारण करते हुए परम पद को प्राप्त करता है।

## श्लोक 8.14–8.16

- जो अनन्य भाव से निरंतर मेरा स्मरण करता है, वह मुझे सहज ही प्राप्त होता है।
- इस लोक से लेकर ब्रह्मलोक तक सब नश्वर हैं, परंतु जो मुझे प्राप्त कर लेता है, उसका पुनर्जन्म नहीं होता।

## श्लोक 8.17–8.22

- ब्रह्मा का एक दिन हजार युगों के बराबर है और उसकी रात भी उतनी ही लंबी होती है।

- सृष्टि चक्र बार-बार उत्पन्न और नष्ट होता है।
- लेकिन *अक्षर ब्रह्म* नित्य और अविनाशी है।
- वही परम धाम है, जिसे प्राप्त करके जीव जन्म-मरण से मुक्त हो जाता है।

## श्लोक 8.23–8.28

- मृत्यु के समय देवयान (उत्तरी मार्ग) से जाने वाला योगी मोक्ष प्राप्त करता है, जबकि पितृयान (दक्षिणी मार्ग) से जाने वाला पुनर्जन्म लेता है।
- जो योगी दिन-रात, शुभ-अशुभ से परे होकर ईश्वर में लीन रहता है, वह परमगति प्राप्त करता है।

## अध्याय 8 का सारांश

अक्षर ब्रह्म योग हमें सिखाता है कि –

- मृत्यु-काल में स्मरण अत्यंत महत्वपूर्ण है।
- “ॐ” और ईश्वर का ध्यान करने वाला भक्त जन्म-मरण से मुक्त होता है।
- संसार चक्र नश्वर है, केवल *अक्षर ब्रह्म* ही शाश्वत है।
- ईश्वर की भक्ति और ध्यान से ही परमगति संभव है।

👉 यह अध्याय स्पष्ट करता है कि सच्चा योगी मृत्यु के समय भी भगवान का स्मरण करके अमर पद को प्राप्त करता है।

—



## श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 9: राजविद्या राजगुह्य योग

गीता का नौवाँ अध्याय राजविद्या राजगुह्य योग कहलाता है।

यह अध्याय गीता का हृदय माना जाता है, क्योंकि इसमें भगवान श्रीकृष्ण भक्ति का सर्वोच्च महत्व बताते हैं। यह अध्याय सर्वश्रेष्ठ ज्ञान और रहस्य (राजविद्या और राजगुह्य) का वर्णन करता है।

श्रीकृष्ण बताते हैं कि –

- भक्ति सबसे सरल और उत्तम मार्ग है,
- ईश्वर सबमें व्याप्त हैं,
- और भक्त-भक्ति से भगवान अत्यंत प्रसन्न होते हैं।

### श्लोक 9.1–9.3

भगवान बोले – “हे अर्जुन! मैं तुम्हें वह राजविद्या और राजगुह्य ज्ञान बताऊँगा, जिसे जानकर तुम मोक्ष को प्राप्त करोगे।

यह सबसे पवित्र, अत्यंत गूढ़ और सीधा-सादा ज्ञान है।

लेकिन जो अविश्वासी हैं, वे इसका लाभ नहीं पाते और संसार में जन्म-मरण का चक्कर काटते रहते हैं।”

## श्लोक 9.4–9.10

- यह सम्पूर्ण जगत मुझसे व्याप्त है, परंतु मैं उसमें बँधा हुआ नहीं हूँ।
- सभी प्राणी मेरे अधीन हैं, लेकिन मैं उन सबसे परे हूँ।
- जैसे वायु आकाश में रहती है, वैसे ही सब मुझमें स्थित हैं।
- माया के माध्यम से सृष्टि उत्पन्न होती है, परंतु मैं अनासक्त रहकर उसे संचालित करता हूँ।

## श्लोक 9.11–9.19

- मूर्खजन मुझे मानव रूप में देखकर अवज्ञा करते हैं, जबकि मैं सबका ईश्वर हूँ।
- महात्मा लोग मुझे दैवी स्वरूप मानकर मेरी भक्ति करते हैं।
- मैं ही यज्ञ, तप, मंत्र, औषधि, अग्नि, आहुति और फल हूँ।
- मैं ही मृत्यु और अमरत्व हूँ, अस्तित्व और अनस्तित्व हूँ।

## श्लोक 9.20–9.25

- स्वर्ग की इच्छा से यज्ञ करने वाले देवताओं को प्राप्त करते हैं, किंतु वह सुख भी नश्वर है।
- जो मुझे अनन्य भाव से भजते हैं, उन्हें मैं योग-क्षेम प्रदान करता हूँ।
- जो अन्य देवताओं की पूजा करते हैं, वे भी वास्तव में मुझे ही पूजते हैं, परंतु वे अविद्या से सीमित फल प्राप्त करते हैं।

## श्लोक 9.26–9.34

- यदि कोई भक्त मुझे पत्र (पत्ता), पुष्प, फल या जल भी प्रेमपूर्वक अर्पित करता है, तो मैं उसे स्वीकार करता हूँ।
- जो कुछ भी करो, खाओ, अर्पण करो – उसे भगवान को समर्पित करो।
- जो ऐसा करता है, वह कर्मबंधन से मुक्त हो जाता है।
- भगवान कहते हैं – “हे अर्जुन! मेरा भक्त चाहे किसी भी जाति, लिंग या परिस्थिति का हो, वह मुझे भजकर मोक्ष को प्राप्त कर सकता है।”

## अध्याय 9 का सारांश

राजविद्या राजगुह्य योग हमें सिखाता है कि –

- भक्ति ही सर्वोच्च साधन है, जो सरल भी है और गूढ़ भी।
- भगवान सर्वत्र व्याप्त हैं, परंतु भक्त-भक्ति से विशेष रूप से प्रकट होते हैं।
- जो श्रद्धा और प्रेम से भगवान को स्मरण करता है, वह भगवान को प्राप्त करता है।
- जाति, लिंग या स्थिति कोई बाधा नहीं है – केवल भक्ति ही मुक्ति का साधन है।

👉 यह अध्याय स्पष्ट करता है कि प्रेम और भक्ति से भगवान सरलता से प्रसन्न होते हैं और भक्त को मोक्ष प्रदान करते हैं।

—

## श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 10: विभूति योग

गीता का दसवाँ अध्याय विभूति योग कहलाता है।

इस अध्याय में भगवान श्रीकृष्ण अपनी दिव्य विभूतियों (दैवी ऐश्वर्यों) का वर्णन करते हैं। वे अर्जुन को बताते हैं कि –

- समस्त जगत उनकी शक्ति और विभूति से युक्त है,
- प्रत्येक श्रेष्ठ, अद्वितीय और सामर्थ्यवान वस्तु या व्यक्तित्व उनका ही अंश है।

यह अध्याय भक्त में भक्ति और श्रद्धा को और प्रबल करता है।

### श्लोक 10.1–10.5

भगवान बोले –

- “हे अर्जुन! मेरी बातें सुनो, क्योंकि मैं तुम्हें हित की बातें कह रहा हूँ।
- न देवता और न ही ऋषि मेरे उद्गम को जानते हैं।
- मैं ही सबका आदि, मध्य और अंत हूँ।
- बुद्धि, ज्ञान, क्षमा, सत्य, शांति, सुख-दुःख, भय-निभय, जन्म-मरण, अहिंसा, समता – ये सब मुझसे ही उत्पन्न होते हैं।”

### श्लोक 10.6–10.11

- सप्तर्षि, मनु और महर्षि सब मेरे द्वारा उत्पन्न हैं।

- जो भक्त भावपूर्ण होकर मेरी भक्ति करते हैं, मैं उन्हें विवेक प्रदान करता हूँ और उनके हृदय में स्थित होकर अज्ञान को दूर करता हूँ।

## श्लोक 10.12–10.18

अर्जुन बोले –

- “हे भगवान! आप परमब्रह्म, परमधाम, परमपवित्र और सनातन पुरुष हैं।
- आप सबके आदिदेव और जन्मरहित ईश्वर हैं।
- मैं आपकी महिमा सुनना चाहता हूँ। कृपया अपनी विभूतियों का विस्तार से वर्णन कीजिए।”

## श्लोक 10.19–10.42

भगवान बोले –

- “हे अर्जुन! मेरी विभूतियों का वर्णन अंतहीन है।
- प्रमुख विभूतियाँ सुनो –
  - मैं आत्मा हूँ, जो सब प्राणियों के हृदय में स्थित है।
  - मैं आदित्य में विष्णु, ज्योतिष्मानों में सूर्य, वेदों में सामवेद और देवताओं में इंद्र हूँ।
  - इंद्रियों में मन, प्राणियों में चेतना और पर्वतों में मेरु हूँ।
  - ऋषियों में नारद, गंधर्वों में चित्ररथ, यक्षों में कुबेर और पांडवों में अर्जुन हूँ।
  - शस्त्रधारियों में राम, जलचरों में मगरमच्छ, नदियों में गंगा हूँ।

- हे अर्जुन! जान लो कि जो भी भव्यता, सौंदर्य, शक्ति और महिमा है, वह सब मेरी ही विभूति का अंश है।
- किंतु मेरी सम्पूर्ण विभूतियों का वर्णन करना असंभव है। इस थोड़े से ज्ञान से ही तुम समझ सकते हो कि मैं ही सम्पूर्ण सृष्टि को धारण करता हूँ।”

## अध्याय 10 का सारांश

विभूति योग हमें सिखाता है कि –

- भगवान ही सभी शक्तियों, गुणों और ऐश्वर्यों का मूल स्रोत हैं।
- संसार में जो भी श्रेष्ठ, अद्भुत और महान है, वह भगवान की विभूति का ही अंश है।
- ईश्वर की विभूतियों को जानकर भक्त की श्रद्धा और भक्ति और भी दृढ़ हो जाती है।

👉 यह अध्याय स्पष्ट करता है कि सम्पूर्ण जगत भगवान की विभूतियों से परिपूर्ण है और उनका स्मरण भक्ति को गहरा करता है।

—

## श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 11: विश्वरूप दर्शन योग

गीता का ग्यारहवाँ अध्याय विश्वरूप दर्शन योग कहलाता है।

इस अध्याय में भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को अपना अनंत, विराट और दिव्य विश्वरूप दिखाते हैं।

अर्जुन दिव्य दृष्टि प्राप्त कर भगवान को समस्त ब्रह्मांड में व्याप्त, असंख्य रूपों, मुखों, भुजाओं और अद्भुत शक्तियों से युक्त देखते हैं।

यह अध्याय भक्त के हृदय में ईश्वर की सर्वव्यापकता और सर्वशक्तिमान स्वरूप का बोध कराता है।

### श्लोक 11.1–11.4

अर्जुन बोले –

- “हे भगवान! आपने मुझे अध्यात्म और अपनी विभूतियों का रहस्य बताया है, जिससे मेरा मोह दूर हो गया है।
- अब यदि आप कृपा करें तो मुझे अपने विराट रूप का दर्शन कराइए।”

### श्लोक 11.5–11.8

भगवान बोले –

- “हे अर्जुन! देखो मेरे अनंत रूपों को – देवताओं, अद्भुत स्वरूपों, रंग-बिरंगे आकारों और रूपों को।

- तुम जो देखना चाहते हो, सब कुछ मेरे भीतर देख सकते हो।
- परंतु केवल तुम्हारी दृष्टि से यह सम्भव नहीं है। इसलिए मैं तुम्हें दिव्य दृष्टि प्रदान करता हूँ।”

## श्लोक 11.9–11.14

संजय ने धृतराष्ट्र से कहा –

- “हे राजन! तब अर्जुन ने भगवान का विराट रूप देखा –
  - असंख्य मुख, नेत्र, भुजाएँ, और अद्भुत रूप।
  - अनगिनत आभूषण और दिव्य अस्त्र-शस्त्र।
  - तेजस्वी सूर्य और अग्नि के समान प्रकाशमान।
- उस अद्भुत रूप को देखकर अर्जुन चकित और रोमांचित हो गया।”

## श्लोक 11.15–11.31

अर्जुन ने कहा –

- “हे भगवान! मैं आपके शरीर में समस्त देवताओं, ऋषियों और अद्भुत रूपों को देख रहा हूँ।
- मैं आपको अनंत भुजाओं, नेत्रों और मुखों सहित चारों ओर फैला हुआ देख रहा हूँ।
- आपके विराट रूप से संपूर्ण आकाश और पृथ्वी व्याप्त हो रहे हैं।
- आपके भयानक दाँत और अग्नि समान मुख देखकर सब दिशाएँ काँप रही हैं।



- हे विष्णु! सब योद्धा आपके अग्नि-ज्वालामुखी मुख में प्रवेश कर रहे हैं, जैसे पतंगे अग्नि में गिरते हैं।”

## श्लोक 11.32–11.34

भगवान बोले –

- “मैं काल रूप हूँ, लोकसंहारक। इस समय उपस्थित सब योद्धा तुम्हारे बिना भी नष्ट हो चुके हैं।
- इसलिए तुम युद्ध करो, क्योंकि उनका वध पहले ही मेरे द्वारा निश्चित हो चुका है।
- हे अर्जुन! तुम केवल निमित्त मात्र बनो।”

## श्लोक 11.35–11.46

अर्जुन ने कहा –

- “हे कृष्ण! आप आदिदेव, सनातन पुरुष और जगत के परम आश्रय हैं।
- आपके विराट स्वरूप को देखकर मेरा मन भय और विस्मय से भर गया है।
- कृपया अपने उस चतुर्भुज रूप में प्रकट हो जाइए, जिससे मेरा हृदय शांति पाए।”

## श्लोक 11.47–11.55

भगवान बोले –

- “हे अर्जुन! यह रूप जिसे तुमने देखा है, अत्यंत दुर्लभ है। देवता भी इसके दर्शन की कामना करते हैं।
- केवल अनन्य भक्ति के द्वारा ही इस रूप को देखा जा सकता है।
- जो मुझे प्रेमपूर्वक भजता है, वही मुझे जान सकता है, देख सकता है और मुझमें प्रवेश कर सकता है।”

## अध्याय 11 का सारांश

विश्वरूप दर्शन योग हमें सिखाता है कि –

- भगवान समस्त ब्रह्मांड में व्याप्त हैं और वे काल रूप से सभी का संहारक भी हैं।
- भक्त को यह समझना चाहिए कि मनुष्य केवल ईश्वर की इच्छा का निमित्त मात्र है।
- अनन्य भक्ति से ही भगवान के वास्तविक स्वरूप का अनुभव संभव है।

👉 यह अध्याय भगवान की सर्वव्यापकता और अनन्यता का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

—

## श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 12: भक्ति योग

गीता का बारहवाँ अध्याय भक्ति योग कहलाता है।

यह अध्याय विशेष रूप से भक्त और भगवान के संबंध को स्पष्ट करता है।  
अर्जुन भगवान से प्रश्न करते हैं कि –

कौन श्रेष्ठ है?

1. वे जो निराकार, अव्यक्त परमात्मा की उपासना करते हैं
2. या वे जो साकार भगवान की प्रेमपूर्वक भक्ति करते हैं

भगवान बताते हैं कि साकार रूप की भक्ति करना साधकों के लिए सरल और कल्याणकारी मार्ग है।

### श्लोक 12.1–12.4

अर्जुन ने पूछा –

- “हे भगवान! जो भक्त आपके साकार रूप की उपासना करते हैं और जो अव्यक्त निराकार ब्रह्म का ध्यान करते हैं – उनमें से कौन श्रेष्ठ है?”

भगवान बोले –

- “जो अनन्य भाव से मेरा स्मरण करते हैं और श्रद्धा के साथ मेरी उपासना करते हैं, वे मुझे अत्यंत प्रिय हैं।
- जो अव्यक्त ब्रह्म का ध्यान करते हैं, वे भी मुक्त होते हैं, परंतु वह मार्ग कठिन है।”

## श्लोक 12.5–12.8

“निराकार की साधना कठिन है, क्योंकि देहधारी जीव के लिए अव्यक्त मार्ग पर चलना सहज नहीं है।

परंतु जो मेरा स्मरण करता है, मन और बुद्धि को मुझमें अर्पित करता है – वह शीघ्र ही मुझे प्राप्त करता है।”

## श्लोक 12.9–12.12

भगवान ने साधना की क्रमबद्ध सीढ़ियाँ बताई –

1. यदि तुम मन को मुझमें स्थिर नहीं कर सकते, तो अभ्यास योग करो।
2. यदि अभ्यास भी कठिन हो, तो मेरे लिए कर्म करो।
3. यदि यह भी संभव न हो, तो निष्काम कर्म करो।
4. यदि निष्काम कर्म भी कठिन लगे, तो ज्ञान और ध्यान का मार्ग अपनाओ।

## श्लोक 12.13–12.20

भगवान ने अपने प्रिय भक्त के लक्षण बताए –

- जो द्वेष रहित, करुणामय, क्षमाशील और संतोषी है।
- जो मित्र और शत्रु में समभाव रखता है।
- जो आसक्ति, अहंकार और मोह से रहित है।
- जो शांत, श्रद्धावान और स्थिरचित्त है। ऐसा भक्त भगवान को अत्यंत प्रिय है।

## अध्याय 12 का सारांश

भक्ति योग हमें सिखाता है कि –

- साकार भगवान की प्रेमभक्ति सबसे सरल और सर्वोत्तम साधना है।
- निराकार उपासना भी संभव है, परंतु वह कठिन और जटिल है।
- सच्चा भक्त विनम्र, करुणामय, समभावयुक्त और अहंकाररहित होता है।
- भगवान के लिए कर्म और समर्पण ही मोक्ष का सरल मार्ग है।

👉 यह अध्याय स्पष्ट करता है कि अनन्य भक्ति ही ईश्वर को पाने का सबसे सहज और प्रिय मार्ग है।

—

## श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 13: क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ विभाग योग

गीता का तेरहवाँ अध्याय क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ विभाग योग कहलाता है।

इस अध्याय में भगवान श्रीकृष्ण शरीर और आत्मा के भेद का गहन ज्ञान प्रदान करते हैं।

- क्षेत्र (शरीर) : यह नश्वर भौतिक शरीर है।
- क्षेत्रज्ञ (आत्मा) : यह अविनाशी आत्मा है, जो शरीर में निवास करती है।

इस अध्याय में भगवान बताते हैं कि आत्मा शाश्वत है, जबकि शरीर नश्वर है।

सच्चा ज्ञानी वह है जो इस भेद को समझकर आत्मा को परमात्मा से जोड़ता है।

### श्लोक 13.1–13.3

अर्जुन ने पूछा –

- “हे भगवान! कृपया मुझे क्षेत्र (शरीर), क्षेत्रज्ञ (आत्मा) और ज्ञान का स्वरूप समझाइए।”

भगवान बोले –

- “हे अर्जुन! यह शरीर क्षेत्र कहलाता है और जो इसे जानता है, वह क्षेत्रज्ञ है।
- मैं ही सब क्षेत्रों (शरीरों) में क्षेत्रज्ञ के रूप में स्थित हूँ।”

## श्लोक 13.4–13.7

- “ऋषियों और शास्त्रों ने क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ का विस्तार से वर्णन किया है।
- संक्षेप में कहूँ तो – पंचमहाभूत, अहंकार, बुद्धि, अविद्या, इन्द्रियाँ और मन – ये सब क्षेत्र में आते हैं।
- इच्छा, द्वेष, सुख-दुःख, स्थूल और सूक्ष्म भावनाएँ भी शरीर का ही अंग हैं।”

## श्लोक 13.8–13.12

भगवान ने सच्चे ज्ञान के गुण बताए –

- विनम्रता, अहिंसा, क्षमा, पवित्रता, गुरुसेवा, आत्मसंयम।
- जन्म-मरण, बुढ़ापा और रोग को दुःख मानना।
- संसार की नश्वरता को समझना और ईश्वर में भक्ति रखना।

## श्लोक 13.13–13.19

भगवान बोले –

- “अब मैं उस परम सत्य का वर्णन करता हूँ जिसे जानकर मोक्ष प्राप्त होता है।
- वह न प्रारंभ है, न अंत; न अस्ति है, न अनस्ति।
- वह सबमें व्याप्त है, परंतु इन्द्रियों से परे है।
- वह भीतर भी है और बाहर भी, स्थिर भी है और गतिशील भी।”

## श्लोक 13.20–13.24

- प्रकृति और पुरुष (आत्मा) दोनों ही अनादि हैं।
- सभी क्रियाएँ प्रकृति से उत्पन्न होती हैं, जबकि सुख-दुःख का अनुभव पुरुष करता है।
- जो इस भेद को जानता है, वह जन्म-मरण के बंधन से मुक्त हो जाता है।

## श्लोक 13.25–13.34

- कुछ लोग ध्यान के द्वारा आत्मा को जानने का प्रयास करते हैं।
- कुछ ज्ञान द्वारा, कुछ कर्म द्वारा, और कुछ अन्य के मार्ग का अनुसरण करके।
- आत्मा शाश्वत है, न कभी जन्म लेती है और न कभी नष्ट होती है।
- आत्मा शरीर में रहते हुए भी शरीर के कर्मों से लिप्त नहीं होती।

## अध्याय 13 का सारांश

क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ विभाग योग हमें सिखाता है कि –

- शरीर नश्वर है, परंतु आत्मा अविनाशी है।
- आत्मा और परमात्मा का संबंध जानना ही सच्चा ज्ञान है।
- सच्चा ज्ञानी संसार को क्षणभंगुर मानकर परमात्मा में ही स्थिर होता है।

👉 यह अध्याय आत्मा और शरीर के अंतर को समझाकर भक्ति और मोक्ष की राह दिखाता है।



## श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 14: गुणत्रय विभाग योग

गीता का चौदहवाँ अध्याय गुणत्रय विभाग योग कहलाता है।

इस अध्याय में भगवान श्रीकृष्ण सृष्टि के संचालन के मूल तीन गुणों का वर्णन करते हैं —

1. सत्त्व गुण – शुद्धता, प्रकाश, ज्ञान और संतुलन का प्रतीक।
2. रजोगुण – इच्छाएँ, कामना, परिश्रम और आसक्ति का प्रतीक।
3. तमोगुण – अज्ञान, आलस्य और मोह का प्रतीक।

मनुष्य का आचरण, विचार और जीवन इन गुणों के प्रभाव से नियंत्रित होता है। जो इनसे ऊपर उठकर केवल भगवान पर स्थिर होता है, वही मोक्ष प्राप्त करता है।

### श्लोक 14.1–14.4

भगवान बोले –

- “हे अर्जुन! यह उत्तम ज्ञान मैं तुम्हें बताता हूँ, जिसे जानकर ऋषि परम सिद्धि को प्राप्त हुए।
- सम्पूर्ण प्राणियों का जन्म प्रकृति (माया) और पुरुष (ईश्वर) से होता है।
- मैं बीजदाता पिता हूँ और प्रकृति माता है, जो सबको जन्म देती है।”

### श्लोक 14.5–14.9

- प्रकृति में तीन गुण नित्य रहते हैं – सत्त्व, रजस और तमस।

- ये गुण जीवात्मा को शरीर से बाँधते हैं।
- सत्त्व गुण आनंद और ज्ञान से बाँधता है,
- रजोगुण कर्म और फल की लालसा से बाँधता है,
- तमोगुण अज्ञान, आलस्य और निद्रा से बाँधता है।

## श्लोक 14.10–14.13

- कभी सत्त्व गुण प्रबल होता है, कभी रजोगुण और कभी तमोगुण।
- सत्त्व गुण का प्रभाव – प्रकाश, पवित्रता और संतोष।
- रजोगुण का प्रभाव – लोभ, असंतोष और कर्मों में व्यस्तता।
- तमोगुण का प्रभाव – अज्ञान, भ्रम, आलस्य और प्रमाद।

## श्लोक 14.14–14.18

- सत्त्व गुण से मृत्यु के बाद उच्च लोकों की प्राप्ति होती है।
- रजोगुण से पुनः कर्मबंधनों में जन्म होता है।
- तमोगुण से अधोगति (निचले लोकों) में जन्म होता है।
- सत्त्व गुण सुख प्रदान करता है, रजोगुण दुख और तमोगुण अज्ञान।

## श्लोक 14.19–14.27

- जब साधक इन तीनों गुणों को समान रूप से देखता है और समझता है कि भगवान ही सबका नियंता हैं, तब वह गुणों से ऊपर उठ जाता है।
- ऐसा व्यक्ति जन्म-मरण से मुक्त होकर अमृत पद (मोक्ष) को प्राप्त होता है।

- भगवान कहते हैं – “जो मेरी अनन्य भक्ति करता है, वह गुणत्रय से ऊपर उठकर ब्रह्मभाव को प्राप्त करता है।
- मैं ही अमृत, धर्म और शाश्वत आनंद का आधार हूँ।”

## अध्याय 14 का सारांश

गुणत्रय विभाग योग हमें सिखाता है कि –

- सत्त्व, रजस और तमस – ये तीनों गुण जीव को संसार में बाँधते हैं।
- जब मनुष्य इनसे परे होकर भगवान की शरण लेता है, तभी मोक्ष संभव है।
- केवल अनन्य भक्ति ही साधक को गुणों से ऊपर उठाकर ब्रह्मभाव तक ले जाती है।

👉 यह अध्याय स्पष्ट करता है कि मनुष्य को गुणों से ऊपर उठकर परमात्मा में स्थिर होना चाहिए।

## श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 15: पुरुषोत्तम योग

गीता का पंद्रहवाँ अध्याय पुरुषोत्तम योग कहलाता है।

इस अध्याय में भगवान श्रीकृष्ण ने संसार को एक उल्टे पीपल के वृक्ष के रूप में समझाया है, जिसकी जड़ें ऊपर (परमात्मा में) हैं और शाखाएँ नीचे (भौतिक जगत में) फैली हुई हैं।

जो व्यक्ति इस वृक्ष को विवेक से काट देता है, वही भगवान के शाश्वत धाम को प्राप्त करता है।

इस अध्याय में जीवात्मा, परमात्मा और पुरुषोत्तम भगवान के भेद को स्पष्ट किया गया है।

### श्लोक 15.1–15.3

- भगवान ने संसार को अश्वत्थ वृक्ष (पीपल का पेड़) कहा है – जिसकी जड़ें ऊपर और शाखाएँ नीचे हैं।
- यह वृक्ष वेदों द्वारा विस्तृत है, और इसके पत्ते वेद मंत्र हैं।
- जो इसकी वास्तविकता जानता है, वही वेदों का ज्ञाता है।
- इस वृक्ष की जड़ मोह और आसक्ति है, जिसे विवेक और वैराग्य से काटना चाहिए।

### श्लोक 15.4–15.6

- इस संसार वृक्ष को काटकर साधक उस धाम की खोज करता है जहाँ पहुँचने के बाद पुनः लौटना नहीं पड़ता।
- वह धाम मेरा परम धाम है।

- वहाँ न सूर्य चमकता है, न चंद्रमा और न अग्नि – वह धाम स्वप्रकाश है।

## श्लोक 15.7–15.11

- जीवात्मा मेरी सनातन अंश है, परंतु प्रकृति से बंधकर इंद्रियों के कारण संसार में भटकता है।
- जब वह शरीर को छोड़ता है, तो इंद्रियों के साथ नए शरीर में प्रवेश करता है।
- ज्ञानी इसे समझते हैं, लेकिन अज्ञानी इसे नहीं पहचान पाते।

## श्लोक 15.12–15.15

- सूर्य, चंद्रमा और अग्नि में जो प्रकाश है, वही मेरा तेज है।
- मैं ही पृथ्वी में रस हूँ, अग्नि में ऊष्मा और जीवों का प्राण हूँ।
- मैं ही हृदय में स्थित होकर स्मृति, ज्ञान और विस्मरण कराता हूँ।
- वेदों का आशय भी मैं ही हूँ।

## श्लोक 15.16–15.20

- संसार में दो प्रकार के पुरुष हैं –
  1. क्षर पुरुष – नाशवान जीव
  2. अक्षर पुरुष – अविनाशी आत्मा
- लेकिन इन दोनों से परे मैं हूँ – पुरुषोत्तम।
- मैं ही समस्त जगत का आधार, नियंता और धारण करने वाला हूँ।
- जो मुझे पुरुषोत्तम स्वरूप से जान लेता है, वही सर्वज्ञ और भक्तिपरायण होता है।

## अध्याय 15 का सारांश

पुरुषोत्तम योग हमें सिखाता है कि –

- यह संसार एक उल्टे पीपल के वृक्ष के समान है, जिसका मूल परमात्मा में है।
- जीवात्मा भगवान का सनातन अंश होते हुए भी मोहवश भौतिक जगत में बंधा रहता है।
- परम पुरुषोत्तम भगवान ही जीव और जगत दोनों से परे हैं।
- जो साधक उन्हें जान लेता है, वही शाश्वत धाम को प्राप्त करता है।

👉 यह अध्याय स्पष्ट करता है कि ईश्वर ही पुरुषोत्तम हैं और उनकी भक्ति ही मुक्ति का मार्ग है।

–

## श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 16: दैवासुर संपद विभाग योग

गीता का सोलहवाँ अध्याय दैवासुर संपद विभाग योग कहलाता है।

इसमें भगवान श्रीकृष्ण ने मनुष्य के दो प्रकार के स्वभाव और गुणों का वर्णन किया है –

**दैवी संपत्ति:** जो मोक्ष की ओर ले जाती है (सत्य, अहिंसा, दया, शांति, विनम्रता, श्रद्धा, दान आदि)।

**आसुरी संपत्ति:** जो बंधन और पतन की ओर ले जाती है (अहंकार, क्रोध, कपट, हिंसा, लोभ, कामना आदि)।

यह अध्याय स्पष्ट करता है कि मनुष्य का स्वभाव ही उसके जीवन की दिशा तय करता है।

### श्लोक 16.1–16.3

भगवान ने दैवी गुणों का वर्णन किया –

- निडरता, मन की पवित्रता, आत्मसंयम, दान, यज्ञ, अध्ययन, तप, अहिंसा, सत्य, करुणा, क्षमा।
- दया, नम्रता, धैर्य, शांति, विनम्रता, लज्जा, दृढ़ता और क्षमा।
- दैवी गुणों वाला मनुष्य मोक्ष के योग्य होता है।

## श्लोक 16.4

आसुरी गुण –

- दंभ, अहंकार, क्रोध, कठोरता, अज्ञान और पाखंड।
- इन गुणों वाला मनुष्य बंधन और अधोगति को प्राप्त होता है।

## श्लोक 16.5–16.9

- दैवी संपत्ति मोक्ष का मार्ग है, जबकि आसुरी संपत्ति बंधन और नरक का मार्ग है।
- आसुरी स्वभाव वाले लोग कहते हैं – “यह जगत अनीश्वर और असत्य है, केवल वासना और भोग के लिए है।”
- ऐसे लोग अधर्म, लोभ और हिंसा से संसार का नाश करते हैं।

## श्लोक 16.10–16.20

- आसुरी लोग काम, क्रोध और लोभ में फँसकर पापमय कर्म करते हैं।
- वे धन और भोग के अहंकार में डूबे रहते हैं।
- वे बार-बार जन्म लेकर अधम योनियों में गिरते हैं।
- अंततः वे भगवान से विमुख होकर नरक में जाते हैं।

## श्लोक 16.21–16.24

- काम, क्रोध और लोभ – ये तीन नरक के द्वार हैं, जो आत्मा का पतन करते हैं।



- जो इन्हें छोड़ देता है, वही मोक्ष पाता है।
- मनुष्य को शास्त्रानुसार आचरण करना चाहिए।
- शास्त्रों की मर्यादा ही धर्म और अधर्म का अंतिम प्रमाण है।

## अध्याय 16 का सारांश

दैवासुर संपद विभाग योग हमें सिखाता है कि –

- मनुष्य को दैवी गुणों को अपनाना चाहिए, क्योंकि वही मोक्ष की ओर ले जाते हैं।
- आसुरी गुण मनुष्य को पाप, अधोगति और नरक की ओर धकेलते हैं।
- काम, क्रोध और लोभ ही पतन के मुख्य कारण हैं।
- शास्त्रों का पालन और भगवान की भक्ति ही सच्चा मार्ग है।

👉 यह अध्याय स्पष्ट करता है कि दैवी गुण ही जीवन को धन्य बनाते हैं, जबकि आसुरी गुण विनाशकारी होते हैं।

–

## श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 17: श्रद्धात्रय विभाग योग

गीता का सत्रहवाँ अध्याय श्रद्धात्रय विभाग योग कहलाता है।

इसमें भगवान श्रीकृष्ण ने तीन प्रकार की श्रद्धा और उनसे संबंधित आचरण का वर्णन किया है। मनुष्य जिस प्रकार का स्वभाव और गुण धारण करता है, उसी प्रकार की उसकी श्रद्धा होती है।

श्रद्धा तीन प्रकार की होती है:

1. सात्त्विक श्रद्धा – शुद्ध, भगवान और सत्य की ओर ले जाने वाली।
2. राजसिक श्रद्धा – भोग, इच्छाओं और प्रदर्शन पर आधारित।
3. तामसिक श्रद्धा – अज्ञान, आलस्य और पाखंड से युक्त।

यह अध्याय स्पष्ट करता है कि श्रद्धा ही मनुष्य के जीवन और कर्मों की दिशा तय करती है।

### श्लोक 17.1–17.3

अर्जुन ने पूछा – जो लोग शास्त्रों का पालन किए बिना श्रद्धा से पूजन करते हैं, उनकी स्थिति क्या होती है?

श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया – श्रद्धा तीन प्रकार की है – सात्त्विक, राजसिक और तामसिक।

मनुष्य की श्रद्धा ही उसका वास्तविक स्वरूप है।

## श्लोक 17.4–17.6

- सात्त्विक लोग देवताओं की पूजा करते हैं।
- राजसिक लोग यक्ष-राक्षसों की पूजा करते हैं।
- तामसिक लोग भूत-प्रेत और अशुभ शक्तियों की पूजा करते हैं।
- तामसिक स्वभाव वाले लोग अपने शरीर को कष्ट देकर और दूसरों को दुःख देकर असुर स्वभाव को धारण करते हैं।

## श्लोक 17.7–17.10

- आहार भी तीन प्रकार का है – सात्त्विक, राजसिक और तामसिक।
  - सात्त्विक भोजन – रसपूर्ण, पौष्टिक और शुद्ध।
  - राजसिक भोजन – अत्यधिक तीखा, खट्टा, नमकीन, गरम और उत्तेजक।
  - तामसिक भोजन – बासी, दुर्गन्धयुक्त, बचा हुआ और अशुद्ध।

## श्लोक 17.11–17.13

- यज्ञ भी तीन प्रकार का है –
  - सात्त्विक यज्ञ – शास्त्रानुसार, निष्काम भाव से किया गया।
  - राजसिक यज्ञ – दिखावे और फल की इच्छा से किया गया।
  - तामसिक यज्ञ – नियमहीन और अविवेकपूर्ण।

## श्लोक 17.14–17.19

- तपस्या (तप) तीन प्रकार की है –
  1. शारीरिक तप – देव, गुरु और माता-पिता की सेवा।
  2. वाचिक तप – सत्य, प्रिय, हितकर और नियमित भाषण।
  3. मानसिक तप – शांति, करुणा, श्रद्धा और आत्मसंयम।
- सात्त्विक तप शुद्ध और आत्मिक उन्नति के लिए होता है।
- राजसिक तप दिखावे और मान-सम्मान के लिए किया जाता है।
- तामसिक तप हठपूर्वक, अज्ञानवश और आत्म-पीड़ा हेतु किया जाता है।

## श्लोक 17.20–17.22

दान भी तीन प्रकार का है –

1. सात्त्विक दान – योग्य स्थान, योग्य समय और योग्य व्यक्ति को बिना अपेक्षा के किया गया।
2. राजसिक दान – फल की इच्छा और अहंकार से किया गया।
3. तामसिक दान – अपवित्र समय और अयोग्य व्यक्ति को अनादरपूर्वक किया गया।

## श्लोक 17.23–17.28

- ॐ तत् सत् – यह तीन शब्द ब्रह्म और सत्य का द्योतक हैं।
- इन्हीं के उच्चारण से यज्ञ, तप और दान शुद्ध और सात्त्विक बनते हैं।
- जो कार्य शास्त्रों के विरुद्ध और बिना श्रद्धा के होता है, वह व्यर्थ और निष्फल है।

## अध्याय 17 का सारांश

श्रद्धात्रय विभाग योग यह सिखाता है कि –

- मनुष्य की श्रद्धा उसके स्वभाव और गुणों से तय होती है।
- सात्त्विक श्रद्धा मोक्ष और शुद्धता की ओर ले जाती है।
- राजसिक श्रद्धा बंधन और इच्छाओं को बढ़ाती है।
- तामसिक श्रद्धा अज्ञान और पतन का कारण है।
- हर कार्य – भोजन, यज्ञ, तप और दान – यदि सात्त्विक भाव से किया जाए, तो वह कल्याणकारी होता है।

👉 यह अध्याय हमें जीवन के हर कार्य में शुद्धता, निस्वार्थ भाव और श्रद्धा का महत्व सिखाता है।

–

## श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 18: मोक्ष संन्यास योग

मोक्ष संन्यास योग गीता का 18वाँ और अंतिम अध्याय है, जिसमें भगवान श्रीकृष्ण ने संपूर्ण गीता के उपदेशों का सार प्रस्तुत किया है।

इस अध्याय में त्याग (संन्यास), कर्तव्य, ज्ञान, कर्म, भक्ति और मोक्ष का विस्तार से वर्णन है।

अध्याय 18 हमें बताता है कि—

- कर्म को छोड़ना नहीं, बल्कि निष्काम भाव से करना ही सच्चा संन्यास है।
- भक्ति ही मोक्ष का श्रेष्ठ मार्ग है।
- जो श्रद्धा और पूर्ण समर्पण से भगवान की शरण ग्रहण करता है, वही परम शांति और मुक्ति प्राप्त करता है।

### श्लोक 18.1–18.6

अर्जुन ने पूछा: संन्यास और त्याग में क्या अंतर है?

श्रीकृष्ण ने कहा:

1. संन्यास का अर्थ है – फल की आसक्ति त्यागना।
2. त्याग का अर्थ है – कर्म के फल का परित्याग करना।

यज्ञ, दान और तप को त्यागना नहीं चाहिए, क्योंकि ये शुद्धिकरण के साधन हैं।

## श्लोक 18.7–18.12

- कर्म का त्याग तीन प्रकार का है – सात्त्विक, राजसिक और तामसिक।
- कर्तव्य कर्म का त्याग तामसिक है।
- केवल कष्ट समझकर त्याग करना राजसिक है।
- बिना फल की आसक्ति के शास्त्रसम्मत कर्म करना सात्त्विक त्याग है।

## श्लोक 18.13–18.18

कर्म के पाँच कारण बताए गए –

1. अधिष्ठान (शरीर)
2. कर्ता
3. विभिन्न इंद्रियाँ
4. अनेक प्रकार की चेष्टाएँ
5. दैव (ईश्वर की इच्छा)

---

## श्लोक 18.19–18.40

- ज्ञान, कर्म और कर्ता भी तीन प्रकार के होते हैं – सात्त्विक, राजसिक और तामसिक।
- बुद्धि और धृति (धैर्य) भी गुणों के आधार पर तीन प्रकार की होती है।
- सुख भी तीन प्रकार का है – सात्त्विक, राजसिक और तामसिक।

## श्लोक 18.41–18.48

- वर्ण धर्म (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र) का वर्णन।
- प्रत्येक वर्ण का कार्य उनके स्वभाव और गुणों पर आधारित है।
- अपने धर्म में स्थित होकर किया गया कर्म ही श्रेष्ठ है।

## श्लोक 18.49–18.66

- भगवान ने बताया – निष्काम भाव से कर्म करने वाला, मन और बुद्धि से संयमित योगी ही मोक्ष प्राप्त करता है।
- सच्चा ज्ञान और भक्ति ही मुक्ति का मार्ग है।
- प्रसिद्ध श्लोक (18.66):

“सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज। अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥”

👉 अर्थात् – सब धर्मों को छोड़कर केवल मेरी शरण में आओ, मैं तुम्हें सब पापों से मुक्त कर दूँगा, चिंता मत करो।

## श्लोक 18.67–18.78

- यह ज्ञान केवल भक्त और योग्य शिष्य को ही बताया जाना चाहिए।
- अंत में संजय ने धृतराष्ट्र से कहा – जहाँ योगेश्वर श्रीकृष्ण और धनुर्धर अर्जुन हैं, वहाँ विजय, समृद्धि, शक्ति और धर्म निश्चित रूप से होते हैं।



## अध्याय 18 का सारांश

मोक्ष संन्यास योग गीता का समापन अध्याय है जो यह सिखाता है:

- संन्यास का अर्थ है फल की आसक्ति छोड़ना, न कि कर्म का त्याग करना।
- यज्ञ, दान और तप जैसे सत्कर्म आवश्यक हैं।
- सात्त्विक भाव से किया गया कर्म, ज्ञान और भक्ति ही मोक्ष का साधन है।
- भगवान की शरणागति ही जीवन का अंतिम और सर्वोच्च लक्ष्य है।

👉 यह अध्याय सम्पूर्ण गीता का निष्कर्ष और सार है।

—

# अंतिम विचार

श्रीमद्भगवद्गीता का अध्ययन हमें यह सिखाता है कि जीवन केवल कर्म करने और फल प्राप्त करने तक सीमित नहीं है। यह हमें निष्काम भाव, भक्ति, ज्ञान और योग के माध्यम से सही मार्ग पर चलना सिखाता है।

हर अध्याय और प्रत्येक श्लोक जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में मार्गदर्शन प्रदान करता है। अर्जुन और श्रीकृष्ण के संवाद से हम सीखते हैं कि:

- अपने कर्तव्यों का पालन करें, बिना फल की आसक्ति के।
- ज्ञान और विवेक के साथ अपने निर्णय लें।
- भक्ति और श्रद्धा के माध्यम से मानसिक शांति प्राप्त करें।
- जीवन में संतुलन बनाए रखें और मोक्ष की ओर अग्रसर हों।

इस eBook में प्रस्तुत 18 अध्यायों का अध्ययन और श्लोकों का अर्थ आपको आध्यात्मिक विकास, आत्मज्ञान और जीवन में शांति प्राप्त करने का मार्ग दिखाएगा।

भगवद्गीता केवल पढ़ने के लिए नहीं, बल्कि जीवन में व्यावहारिक रूप से लागू करने के लिए बनाई गई है। इस ज्ञान को अपने दिन-प्रतिदिन के कर्मों और निर्णयों में अपनाकर आप अपने जीवन को सार्थक और पुण्यपूर्ण बना सकते हैं।

**“सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज। अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।” – भगवान श्रीकृष्ण (गीता 18.66)**

यह eBook BharatTemples.com द्वारा तैयार की गई है। अधिक अध्यायवार गीता अध्ययन, श्लोक अर्थ और eBook डाउनलोड हेतु हमारी वेबसाइट देखें।

श्रीमद्भगवद्गीता – हिंदी अनुवाद eBook  
18 अध्याय | 700 श्लोक

यह eBook BharatTemples.com द्वारा प्रस्तुत किया गया है।

इसमें भगवद्गीता के सभी 18 अध्यायों का हिंदी अनुवाद, प्रत्येक श्लोक का सरल अर्थ और अध्यायवार सारांश उपलब्ध हैं।

इस eBook का उद्देश्य भारतीय संस्कृति, आध्यात्मिक ज्ञान और जीवन मार्गदर्शन को हर व्यक्ति तक पहुँचाना है।

हम आशा करते हैं कि यह eBook आपके जीवन में **ज्ञान, शांति और संतुलन** लाए।

अधिक अध्यायवार अध्ययन और आध्यात्मिक सामग्री के लिए हमारी वेबसाइट देखें:

[www.BharatTemples.com](http://www.BharatTemples.com)

**Disclaimer:**

यह eBook केवल शैक्षिक और धार्मिक उद्देश्य के लिए तैयार किया गया है।

इसमें प्रस्तुत अनुवाद और अर्थ सरल भाषा में समझाने के लिए हैं।

मूल श्लोक श्रीमद्भगवद्गीता से लिए गए हैं।